ॐ श्री कृष्ण शरणं मम ॐ

卐 भक्तियोग नामक बारहवाँ अध्याय 卐

ठाकुर भिम सिंह द्वारा प्रस्तुत
श्रीमद्भगवद्गीता अमृत
श्लोकों के गूढ़ रहस्यों के साथ

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

भक्तियोग- नामक बारहवाँ अध्याय

01-12 साकार और निराकार के उपासकों की उत्तमता का निर्णय और भगवत्प्राप्ति के उपाय का विषय
13-20 भगवत्-प्राप्त पुरुषों के लक्षण

श्लोक १ - अर्जुन उवाच :

एवं सततयुक्ता ये, भक्तास् त्वां पर्युपासते ।
ये चाप्य् अक्षरम् अव्यक्तं, तेषां के योगवित्तमाः ॥१॥

अर्जुन बोले— जो भक्त सतत युक्त होकर पूर्वोक्त प्रकार से (आपके इस कृष्णस्वरूप सगुण साकार रूप की) उपासना करते हैं और जो भक्त मन और वाणी से परे (अव्यक्त) अक्षर ब्रह्म को निराकार मानकर उसकी उपासना करते हैं, उन दोनों में कौन उत्तम योगी है.

BG 12.1: Arjun inquired: Between those who are steadfastly devoted to Your personal form and those who worship the formless Brahman, whom do You consider to be more perfect in Yog?

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक २ - श्रीभगवानुवाच :

मय्य् आवेश्य मनो ये मां, नित्ययुक्ता उपासते ।
श्रद्धया परयोपेतास्, ते मे युक्ततमा मताः ॥२॥

श्रीभगवान बोले— जो भक्तजन मुझ में मन को एकाग्र करके नित्ययुक्त होकर परम श्रद्धा और भक्ति से युक्त होकर मुझ परब्रह्म परमेश्वर के (कृष्णस्वरूप) सगुण रूप की उपासना करते हैं, वे मेरे मत से श्रेष्ठ हैं. (६.४७ भी देखें) (१२.०२)

इस का यह कारण है कि सगुण रूप का ध्यान सहज में होता है क्योंकि ईश्वरका रूप आँख बन्द करते ही सामने सा प्रतीत होने लगता है । इस से ध्यान लग जाता है और ध्यान से समाधी शीघ्र लग जाती है ।

BG 12.2: The Lord said: Those who fix their minds on Me and always engage in My devotion with steadfast faith, I consider them to be the best yogis.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ३-४ - **ये त्व् अक्षरम् अनिर्देश्यम्, अव्यक्तं पर्युपासते ।**
सर्वत्रगम् अचिन्त्यं च, कूटस्थम् अचलं ध्रुवम् ॥३॥

संनियम्येन्द्रियग्रामं, सर्वत्र समबुद्धयः ।
ते प्राप्नुवन्ति माम्, एव सर्वभूतहिते रताः ॥४॥

परन्तु जो मनुष्य अक्षर, अनिर्वचनीय, अव्यक्त, सर्वगत, अचिन्त्य, अपरिवर्तनशील, अचल और सनातन ब्रह्म की उपासना इन्द्रियों को अच्छी तरह नियमित करके, सभी में समभाव होकर, भूतमात्र के हित में रत रहकर करते हैं, वे भी मुझे प्राप्त करते हैं. (१२.०३-०४)

BG 12.3-4: But those who worship the formless aspect of the Absolute Truth—the imperishable, the indefinable, the unmanifest, the all-pervading, the unthinkable, the unchanging, the eternal, and the immoveable—by restraining their senses and being even-minded everywhere, such persons, engaged in the welfare of all beings, also attain Me.

सवत्रगम् - सब देश, काल, वस्तु और व्यक्तियों में परिपूर्ण होने से ब्रह्म **'सवत्रगम्'** है । सर्वव्यापी होने के कारण वह सीमित मन-बुद्धि-इन्द्रियों से ग्रहण नहीं किया जा सकता ।

Sarvatragam – God is all pervading and limitless, so he cannot be attained by limited mind, intellect, and senses.

अनिर्देश्यम् - जिसे स्पष्ट नहीं बाताया जा सकता, अर्थात् जो भाषा, वाणी आदि का विषय नहीं है, वह **अनिर्देश्यम्** है । निर्देश (संकेत) उसी का किया जा सकता है, जो जाति, गुण, क्रिया एवं सम्बन्ध से युक्त हो, और देश, काल, वस्तु एवं व्यक्ति से परिच्छिन्न हो, प्ररन्तु जो चिन्मय तत्व सर्वत्र परिपूर्ण हो, उस का संकेत् जड़ भाषा, वाणी से कैसे किया जा सकता है ?

Anirdesyam - is that which cannot be defined through language or speech. Only that, which is unaccompanied by caste, quality, action and is confined through space, time, thing, and individual, can be defined or hinted at. Therefore, how can, the all-pervading and sentient (perceived) God, be defined or hinted at, by insentient language.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ५ - **क्लेशोऽधिकतरस् तेषाम्, अव्यक्तासक्तचेतसाम् ।**
अव्यक्ता हि गतिर् दुःखं देहवद्भिर् अवाप्यते ॥५॥

परन्तु उन अव्यक्त में आसक्त हुए चित्त वाले मनुष्यों को (साधना में) क्लेश अधिक होता है, क्योंकि देहधारियों द्वारा अव्यक्त की गति कठिनाई पूर्वक प्राप्त होती है. (१२.०५)

यह निर्गुण परमात्मा की भक्ति है -
इस का कारण यह है कि "योगता, रुचि, और विश्वास का एक साथ आ जाना

बहुत ही कटिन है । रुचि अगर लग भी गई तो योगता न होने से बहुत देर तक रहेगी नही । रुचि टूटने से विश्वास में भी दृढ़त्ता नहीं रह पाएगी ।

BG 12.5: For those whose minds are attached to the unmanifest, the path of realization is full of tribulations. Worship of the unmanifest is exceedingly difficult for embodied beings.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ६-७

ये तु सर्वाणि कर्माणि, मयि संन्यस्य मत्पराः ।
अनन्येनैव योगेन, मां ध्यायन्त उपासते ॥६॥
तेषाम् अहं समुद्धर्ता, मृत्यु संसार सागरात् ।
भवामि नचिरात् पाथ, मय्य् आवेशितचेतसाम् ॥७॥

परन्तु हे अर्जुन, जो भक्त मुझको ही अपना परम लक्ष्य मानते हुए **सभी कर्मों** को मुझे अर्पण करके अनन्य भक्ति के द्वारा मेरे साकार रूप का ध्यान करते हैं, ऐसे भक्तों का — जिनका चित्त मेरे सगुण स्वरूप में स्थिर रहता है — मैं शीघ्र ही मृत्युरूपी संसार सागर से उद्धार कर देता हूं. (१२.०६-०७)

इसे ही भगवान कृष्ण भक्तियोग कहे हैं ।
"सभी कर्मों" का अर्थ है, हर वह कर्म जो पाप, अत्याचर, घूस, चोरी, झूठ आदि से रहित हो । भगवान् का संकेत उन कर्मों पर है जो पवित्र भाव से, सत्यता से, नयाय से, और अहिंसा को ध्यान में रख कर किया गया हो ।
याद रहे कि परमात्मा किसी के पाप को ग्रहण नहीं करते हैं । प्राणी को तो स्वयं अपने आप प्रायश्चित के द्वारा अपने पाप को धोना पड़ता है तभी तो मन और अंत-करण शुद्ध और निर्मल हो सकेगें । अर्थात्, जिस दिन से चेत लो, उस दिन से आगे कोई पाप और अपराध नहीं होना चाहिये । जैसे बालमीक मुनि ।
तामसिक और राजसिक सोभाव को छोड़ कर सात्विक बन जाव तभी तो भगवान् को हर पकाया हुआ भोजन उन्हे पहले अर्पण कर सको, जो प्रसाद हो जाता है और उसे ही हमें ग्रहन करना चाहिये । बिना भगवान् को भोग लगाया हुआ कोई भी वस्तु जिसे हम खाते हैं वह मल के समान बताया गया है । (गीता अध्याय श्लोक)

BG 12.6-7: But those who dedicate all their actions to Me, regarding Me as the Supreme goal, worshiping Me and meditating on Me with **exclusive devotion**, O Parth, I swiftly deliver them from the ocean of birth and death, for their consciousness is united with Me.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ८ -

मय्येव मन आधत्स्व, मयि बुद्धिं निवेशय ।
निवसिष्यसि मय्येव, अत ऊर्ध्वं न संशयः ॥८॥

तुम मुझ में ही अपना मन लगाओ और बुद्धिसे मेरा ही चिन्तन करो, इसके उपरान्त निस्संदेह तुम मुझ में ही निवास करोगे. (१२.०८)

BG 12.8: Fix your mind on Me alone and surrender your intellect to Me. There upon, you will always live in Me. Of this, there is no doubt.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ९ - अथ चित्तं समाधातुं, न शक्नोषि मयि स्थिरम् ।
अभ्यास योगेन ततो, माम् इच्छाप्तुं धनंजय ॥९॥

हे धनंजय, यदि तुम अपने मन को मुझ में स्थिर करने में असमर्थ हो, तो तुम (पूजा, पाठ आदि के) अभ्यास के द्वारा मुझे प्राप्त करने की इच्छा से प्रयत्न करो. (१२.०९)

G 12.9: If you are unable to fix your mind steadily on Me, O Arjun, then practice remembering Me with devotion while constantly restraining the mind from worldly affairs.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक १० - अभ्यासेऽप्य् असमर्थो, ऽसि मत्कर्मपरमो भव ।
मदर्थम् अपि कर्माणि, कुर्वन् सिद्धिम् अवाप्स्यसि ॥१०॥

यदि तुम अभ्यास करने में असमर्थ हो, तो मेरे लिए अपने कर्तव्य कर्मों का पालन करो, कर्मों को मेरे लिए करते हुए तुम मेरी प्राप्तिरूपी सिद्धि पाओगे. (९.२७, १८.४६ भी देखें) (१२.१०)
याने कि जन कल्यान के लिये अपना कर्तव्य समझ कर कर्म करो ।

BG 12.10: If you cannot practice remembering Me with devotion, then just try to work for Me. Thus, performing devotional service to Me, you shall achieve the stage of perfection.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ११ - अथैतद् अप्य् अशक्तोऽसि, कर्तुं मद्योगम् आश्रितः ।
सर्वकर्मफलत्यागं, ततः कुरु यतात्मवान् ॥११॥

यदि इसे भी करने में तुम असमर्थ हो, तो मुझपर आश्रित होकर, मन पर विजय प्राप्त कर, सब कर्मों के फल की आशा का त्याग करो. (१२.११)
याने कि निशकामभाव से अपने कर्तव्य कर्मों का पालन करो ।

BG 12.11: If you are unable to even work for Me in devotion, then try to renounce the fruits of your actions and be situated in the self.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक १२ - **श्रेयो हि ज्ञानम् अभ्यासाज, ज्ञानाद् ध्यानं विशिष्यते ।**
ध्यानात् कर्मफलत्यागस्, त्यागाच् छान्तिर् अनन्तरम् ॥१२॥

मर्म जाने बिना अभ्यास करने से शास्त्रों का ज्ञान श्रेष्ठ है, ज्ञान से परमात्मा के स्वरूप का ध्यान श्रेष्ठ है, और सब कर्मों के फल में आसक्ति का त्याग ध्यानसे भी श्रेष्ठ है, क्योंकि त्याग से तत्काल परम शान्ति की प्राप्ति होती है. (१२.१२)

BG 12.12: Better than mechanical practice is knowledge; better than knowledge is meditation. Better than meditation is renunciation of the fruits of actions, for peace immediately follows such renunciation.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक १३-१४ - **अद्वेष्टा सर्वभूतानां, मैत्रः करुण एव च ।**
निर्ममो निरहंकारः, समदुःखसुखः क्षमी ॥१३॥
संतुष्टः सततं योगी, यतात्मा दृढनिश्चयः ।
मय्य् अर्पित मनोबुद्धिर, यो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥१४॥

जो मनुष्य सभी प्राणियों से द्वेषरहित (**without ememosty**) है, सबका प्रेमी (**friend**) है, दयालु (**merciful, kind, generous**) है, ममता (**affection attachment**) और अहंकार (**Ego**) से रहित है, सुख और दुःख में सम (**is equanimous in pleasure & pain**), क्षमाशील (forgiving) और संतुष्ट (**satisfied**) है; जो अपने मन और इन्द्रियों को वश में करके मुझ में दृढ़निश्चय होकर अपने मन और बुद्धि को मुझे अर्पण करके सदा हमारा ही ध्यान करता है, ऐसा भक्त मुझे प्रिय है. (१२.१३-१४)

BG 12.13-14: Those devotees are very dear to Me who are free from malice toward all living beings, who are friendly, and compassionate. They are free from attachment to possessions and egotism, equanimous in happiness and distress, and ever-forgiving. They are ever-content, steadily united with Me in devotion, self-controlled, of firm resolve, and dedicated to Me in mind and intellect.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक १५ - **यस्मान् नोद्विजते लोको, लोकान् नोद्विजते च यः ।**
हर्षामर्षभयोद्वेगैर् , मुक्तो यः स च मे प्रियः ॥१५॥

जिससे कोई व्यक्ति उद्वेग प्राप्त नहीं करता तथा जो स्वयं भी किसी से उद्विग्न नहीं होता; जो सुख, दुःख, भय और उद्वेग से मुक्त है, वह मुझे प्रिय है. (१२.१५)

BG 12.15: Those who are not a source of annoyance to anyone and who in turn are not agitated by anyone, who are equal in pleasure and pain, and free from fear and anxiety, such devotees of Mine are very dear to Me.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक १६ - **अनपेक्षः शुचिर् दक्ष, उदासीनो गतव्यथः ।**
सर्वारम्भ परित्यागी, यो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥१६॥

जो आकांक्षारहित, शुद्ध, कुशल, पक्षपात से रहित, सुखी और सभी कर्मों में अनासक्त है, वैसा भक्त मुझे प्रिय है. (१२.१६)

BG 12.16: Those who are indifferent to worldly gains, externally and internally pure, skillful, without cares, untroubled, and free from selfishness in all undertakings, such devotees of Mine are very dear to Me.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक १७ - **यो न हृष्यति न द्वेष्टि, न शोचति न काङ्क्षति ।**
शुभाशुभ परित्यागी, भक्तिमान् यः स मे प्रियः ॥१७॥

जो न किसी से द्वेष करता है, न सुख में हर्षित होता है और न दुःख में शोक करता है; जो कामना रहित है तथा शुभ और अशुभ दोनों कर्मों के फल का त्याग करने वाला है, वैसा भक्तियुक्त मनुष्य मुझे प्रिय है. (१२.१७)

BG 12.17: Those who neither rejoice in mundane pleasures nor despair in worldly sorrows, who neither lament for any loss nor hanker for any gain, who renounce both good and evil deeds, such persons who are full of devotion are very dear to Me.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक १८-१९ - **समः शत्रौ च मित्रे च, तथा मानापमानयोः ।**
शीतोष्णसुखदुःखेषु, समः सङ्गविवर्जितः ॥१८॥
तुल्यनिन्दास्तुतिर् मौनी, संतुष्टो येन केनचित् ।
अनिकेतः स्थिरमतिर्, भक्तिमान् मे प्रियो नरः ॥१९॥

जो शत्रु और मित्र, मान और अपमान, सर्दी और गर्मी तथा सुख और दुःख में सम है; जो आसक्ति रहित है, जिसे निन्दा और स्तुति दोनों बराबर है, जो कम बोलता है, जो कुछ हो उसी में संतुष्ट है, जिसे स्थान में आसक्ति नहीं है तथा जिसकी बुद्धि स्थिर है, ऐसा भक्त मुझे प्रिय है. (१२.१८-१९)

BG 12.18-19: Those, who are alike to friend and foe, equipoised in honour and dishonour, cold and heat, joy and sorrow, and are free from all unfavourable association; those who take praise and reproach alike, who are given to silent contemplation, content with what comes their way, without attachment to the place of residence, whose intellect is firmly fixed in Me, and who are full of devotion to Me, such persons are very dear to Me.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक २० - **ये तु धर्म्यामृतम् इदं, यथोक्तं पर्युपासते ।**
श्रद्दधाना मत्परमा, भक्तास् तेऽतीव मे प्रियाः ॥२०॥

जो श्रद्धावान भक्त मुझे ही अपना परम लक्ष्य मानकर उपरोक्त धर्ममय अमृत का जीवन जीते हैं, वे तो मुझे बहुत ही प्रिय हैं. (१२.२०)

BG 12.20: Those who honor this nectar of wisdom declared here, have faith in Me, and are devoted and intent on Me as the supreme goal, they are exceedingly dear to Me.

द्वादशोऽध्याय का सार

भक्तियोग शीर्षक इस अध्याय में बतलाया गया है कि स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ही जीवों के एकमात्र परम उपास्य तत्त्व हैं । यकान्तिक भक्तियुक्त भक्त ही उन के प्रियतम हैं । शुद्ध भक्ति के द्वारा सहज ही भगवद् प्राप्ति होती है ।

बारहवे अध्याय का तात्पर्य :-

भक्त भगवान् का अत्यन्त प्यारा होता है, क्योंकि वह शरीर, ईन्द्रियाँ, मन और बुद्धि सहित अपने आप को भगवान् के अर्पण कर देता है ।
जो परम श्रद्धापूर्वक अपने मन को भगवान् में लगाते हैं, वे भक्त सर्वश्रेष्ठ हैं । भगवान् के परायण हुये जो भक्त सम्पूर्ण कर्मों को भगवान् के अर्पण कर के अनन्य भाव से भगवान् की उपासना करते हैं, भगवान् स्वयं उन का संसार सागर से शीघ्र उद्धार करने वाले बन जाते हैं । जो अपने मन-बुद्धि को भगवान् में लगा देता है, वह भगवान् में ही निवास करता है । जिनका प्राणीमात्र के साथ मित्रता एवं करुणाका वर्ताव है, जो अहंता-ममतासे रहित है, जिन से कोई भी प्राणी उद्विग्न नहीं होता तथा जो स्वयं किसी प्राणी से उद्विग्न नहीं होते, जो नये कर्मों के आरम्भों के त्यागी हैं, जो अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थितियों के आने पर हर्षित एवं उद्विग्न नहीं होते, जो मान-अपमान आदिमें सम रहते हैं, जो जिस किसी भी परिस्थिति में निरन्तर सन्तुष्ट रहते हैं, वे भक्त भगवान् को प्यारे हैं । अगर मनुष्य भगवान् के हो कर ही रहें, भगवान् में ही अपनापन रखे, तो सभी भगवान् के प्यारे बन सकते हैं ।

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

Gita Essence in English – Chapter 12

The devotee is very dear to God, because he offers himself to God along with body, senses, mind, and intellect. Those devotees who put their minds (intellect) in

God with utmost devotion, are the best. The devotees who worship God by offering all their deeds to Him, God Himself becomes their saviour.
He who puts his mind and intellect in God, dwells in God. Those who have friendship and compassion with everyone, who are devoid of ego and affection, who are not the cause of distress to anyone, those who renounce the beginning of new actions, those who do not rejoice or mourn the arrival of favourable and unfavourable situations, those who are indifferent or equanimous in dignity and humiliation, those who remain unmoved in favourable and unfavourable situations, they are very dear to God.

ॐतत्सदिति श्रीमद्भगवतगीतासूपरिष्सु ब्रह्मविद्यां योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे भक्ति योगो नाम द्वादसऽध्याय ॥१२॥